गुरु कृपा के अनुभव

लेखक

काशी प्रसाद श्रीवास्तव, लखनऊ

प्रकाशक :
सदाचार आश्रम, नवाँ मार्ग
लखनऊ (उ.प्र.)

संरक्षक :
परमसन्त श्री कृष्णदयाल
८५६ पुराना कटरा, इलाहाबाद

सम्पादक :
डॉ. राम स्वरूप खरे
एम.ए., पी.एच.डी.
'साहित्यरत्न'

स्वत्वाधिकार प्रकाशकाधीन

प्रतियां :
५००

संस्करण :
२००३

सहयोग राशि :
२०.०० रुपये

मुद्रक :
आर. एस. प्रिंटिंग प्रेस
उरई - जालौन

अनुक्रमणिका

मंगल कामना	०५	कहो मुझको पागल यही आरजू	२५
सम्पादकीय	०६	मन तू करले गुरु से प्यार	२५
प्रस्तावना	०८	जो पकड़ा हाथ है तुमने	२६
वन्दना	०९	गुरु पद रज वन्दन करता हूँ	२६
गुरु एवं ब्रह्मतत्व	०९	तेरे चरणों में जाकर के....	२७
योग साधना	१०	दिल में बैठे हो तुम	२८
नाम महिमा	११	दुनियाँ बनाने वाले	२८
अहं भाव	११	कहते हैं ईश भी यह	२९
प्रेम साधना	१२	देखें सपने नाना प्रकार	२९
मन की आराधना	१३	कहते हैं ज्ञान जिसको	३०
सदाचार	१४	है टेर कौन सी वह	३०
सदाचार आश्रम	१५	मेरो मन निर्मल कैसे होय	३१
भावाञ्जलि	**१८**	ऐसी दृष्टि देउ प्रभु उर में	३२
मन तू राम नाम रस पी ले	१९	कहूँ क्या सेवक की अस बात	३२
मन तू कर ले गुरु से प्यार	१९	हैं कहते सत्य किसको ये भला	३३
तेरे कदमों में आकर के	२०	मन तू करले माँ का ध्यान	३३
मालिक तेरी रजा रहे	२०	जप जप जप.....	३४
यही है तमन्ना कि पागल रहूँ मैं	२१	प्रकाशं नमामि प्रकाशं नमामि	३४
नहीं जानता कि बस प्रेम क्या है	२१	हे गायत्री रूपं	३५
कहाँ जा रहा हूँ किधर जा....	२२	सदाचार के थे पुजारी तुम्हीं तो	३५
कहूँ मैं कैसे मन की बात	२२	गुरु देव तेरे चरणों की	३५
भर दो दिल में ऐसा प्यार	२३	ॐ आनन्द ॐ आनन्द	३६
बहारें यह कह कर चली जा ..	२३	जीवन का मैने सौंप दिया	३६
मन तू नाचे जैसे मोर	२४	तू राम भजन कर प्राणी	३६
नहीं जानता के तेरा रूप क्या है	२४		❖

परम तेजस्वी श्रीकृष्ण दयाल जी महाराज

संरक्षक
सदाचार आश्रम, लखनऊ

मंगल कामना

बाबू काशी प्रसाद द्वारा प्रणीत 'गुरु कृपा के अनुभव' सत्संगी भाइयों के लिये एक अत्यधिक उपयोगी पुस्तक है। इसके पूर्व इनकी दो अत्यन्त सुन्दर पुस्तकें 'मेरे गुरुदेव' जुलाई सन् १९७८ में तथा 'सहज योग' जुलाई १९८० में प्रकाशित हो चुकी हैं।

श्री काशी प्रसाद परम पूज्य चच्चाजी के अनन्य सेवकों में से एक हैं। इनकी अपने सद्गुरु भगवान के प्रति अगाध श्रद्धा है। यह सन् १९४३ ई. में चच्चाजी की शरण में आये और ३० जुलाई १९७३ तक उनका अनोखा और अनमोल सान्निध्य प्राप्त हुआ।

विवेच्य पुस्तक बारह उपशीर्षकों में विभक्त है जिसके अन्दर लेखक ने गुरु तत्व और प्रेम भाव पर अपने व्यावहारिक एवं अनुभवात्मक विचार सामान्य भाषा में प्रस्तुत किये हैं किन्तु उनका निहितार्थ असमान्य ही है। क्योंकि जहाँ वाणी मौन हो जाती है, वहाँ से ही भाव-जगत की सृष्टि होने लगती है। ईश्वर अथवा गुरु तत्व भी एकमात्र भावगम्य ही है।

प्रातः स्मरणीय सद्गुरु भगवान से विनय करता हूँ कि वह लेखक को सदैव सुमति और सुबुद्धि प्रदान करें जिससे वह अपने आध्यात्मिक अनुभवों के माध्यम से जन-जन का कल्याण कर सकें।

भावी जीवन में लेखक के अच्छे स्वास्थ्य की कामना करता हूँ एवं चिरायु होने का आशीर्वाद देता हूँ।

ॐ शान्ति ! ॐ शान्ति ! ॐ शान्ति !

२५.१०.२००३
प्रकाश पर्व

कृष्णदयाल
संरक्षक
सदाचार आश्रम, लखनऊ

सम्पादकीय

'गुरु कृपा के अनुभव' गुरु भक्त श्री काशी प्रसाद श्रीवास्तव, लखनऊ की एक अनूठी कृति है। यह परम पूज्य सन्त श्री भवानी शंकर जी उपाख्य "चच्चा जी" के अनन्य भक्त हैं। इन पर प्रारम्भ से ही सद्गुरु भगवान की अपरम्पार कृपा रही है। उन्हीं की अहैतुकी कृपा द्वारा आप मात्र हाईस्कूल परीक्षा उत्तीर्ण होने पर भी उत्तर प्रदेश राज्य सरकार के सचिवालय में उपसचिव जैसे उत्तरदायित्व पूर्ण पद पर रहे। आपने अपनी दो बहनों और नौ पुत्रियों के विवाह सम्पन्न कराये। साधन-सम्पन्न न होने पर भी राजेन्द्र नगर, लखनऊ में एक अच्छा निजी भवन बनवाया। आप अत्यधिक उदार, साधु स्वभाव एवं परोपकार में निरत एक सद्गृहस्थ सन्त हैं। आपने अपने निज भवन के अग्रभाग में "सदाचार आश्रम" के नाम से सद्गुरु भगवान सन्त श्री भवानी शंकर जी के मन्दिर की स्थापना सन् १९८४ ई. में कराई। जहाँ नित्य प्रति प्रातः-सायं सत्संग एवं आरती होती है।

आप एक श्रेष्ठ कवि भी हैं। यही कारण है कि आपने अपने निश्छल भक्त-हृदय के उद्‌गार अत्यन्त सरल और सरस भाषा में अभिव्यक्त किये हैं जिनमें गुरु-कृपा की लोल-लहरियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। आप जैसे गद्य लिखने में पटु हैं, वैसे ही पद्य लिखने में भी निष्णात हैं। आपने "पागल" उपनाम से जिन पदों की रचना की है, वे अत्यधिक प्रभावी और भक्ति-भावना से परिपूर्ण हैं। आपको संगीत का भी अच्छा ज्ञान है। जब आप हारमोनियम पर अपनी मस्ती में मस्त होकर अपने पद सुनाते हैं तो श्रोतागण भी भाव और प्रेम के समुद्र में डूबने-उतराने लगते हैं। आपके पदों की एक कैसेट भी तैयार की जा चुकी है।

संकलित लेख में आप सबको जहाँ उनकी गद्यमयी सुबोध भाषा के दर्शन होंगे वहीं साथ-साथ उनके द्वारा प्रणीत पदों में उनके आकुल उद्‌गार भी गेय शैली में उपलब्ध होंगे।

कुछ बानगी देखिये -

"तेरे कदमों में आकर के बता दो फिर कहाँ जाऊँ।
दिया था प्यार जो तुमने, बता दो वह कहाँ पाऊँ ??"

तथा -

"दिल में रहे हो फिर भी परदा किये रहे।
मेरी खुदी मिटा दे, फिर तू ही तू रहे।।"

भक्त हृदय कवि को न यश की चाह है और न धन-दौलत की। वह तो एकमात्र अपने परम पूज्य सद्गुरु भगवान के द्वार पर ही पड़े-पड़े अपने को धन्य समझता है। यथा -

"वही ब्रह्म में, वही पिण्ड में, फिर क्यों सोच विचार।
'पागल' की बस एक लगन है, पड़ा रहूँ गुरु द्वार।।"

अब कवि की यह स्थिति हो गई है कि उसे सांसारिक वासनाओं में रस नहीं मिलता। यही कारण है कि अब वह अलौकिक रस को पाकर छक जाना चाहता है। जैसे -

"घटे न कभी बस तेरे प्यार का रस पिलाता रहे तू औ पीता रहूँ मैं।"

कवि बनना ईश्वरीय वरदान है। किसी भी वस्तु और भाव का अनुभव प्रत्येक प्राणी कर लेता है किन्तु वह उसकी अभिव्यक्ति नहीं कर पाता। सहृदय और भावुक हृदय के अन्तर में काव्य-सर्जना ईश्वरीय प्रेरणा पाकर प्रादुर्भूत होती है। फिर जिन के हृदय में सूर और मीरा जैसी तन्मयता होती है उनका क्या कहना। इस अर्थ में 'पागल' अपने गुरु-भगवान के प्रेम में सही अर्थों में पागल हैं और उनके हृदयगत भाव प्रशंस्य हैं।

सचमुच इस नन्हीं-सी कृति में भक्ति-भावना का अगाध सागर लहरा रहा है। आइये, स्वयं इसमें डूबिये और आनन्द पाकर दूसरों को भी इस आनन्द में सहभागी बनाइये।

निःसन्देह सत्संगी भाइयों एवं साहित्य-प्रेमियों के लिये यह संकलन उपादेय सिद्ध होगा, ऐसा मेरा अपना विश्वास है।

❖

प्रस्तावना

गुरु की महिमा अपरम्पार है उसका वाणी से व बुद्धि से वर्णन करना कठिन है। ईश्वर प्राप्ति ही मनुष्य का परम लक्ष्य है जो सद्गुरु की प्राप्ति के बिना सम्भव नहीं और किसी योनि में ईश्वर की प्राप्ति नहीं हो सकती मनुष्य योनि ही ऐसी है जो ईश्वर की प्राप्ति करा सकती है। चार लाख चौरासी हजार योनियों में जीव कष्ट भोगता रहता है तब ईश्वर की अहैतुकी कृपा से मनुष्य जन्म मिलता है। रामायण में लिखा है -

आकर चार लाख चौरासी। योनि भ्रमत यह जिव अविनाशी।।
फिरत सदा माया कर प्रेरा। काल कर्म स्वभाव गुन घेरा।।
कबहुँक कर करुणा नर देही। देत ईश बिन हेत सनेही।।
कर्णधार सद्गरु दृढ़ नावा। दुर्लभ साज सुलभ कर पावा।।

दोहा- जो न तरै भव सागर, नर समाज अस पाय।
सो कृत निंदक मन्द मति, आतम हनि गति पाय।।

गुरु की शरणागति होने से ही मनुष्य को आत्मसाक्षात्कार होकर ईश्वर प्राप्ति होती है तथा मनुष्य भवसागर से पार हो जाता है। संसार माया, ब्रह्म आत्मसाक्षात्कार तथा निजस्वरूप का ज्ञान होना ही गुरु-तत्व है जो कि सद्गुरु द्वारा ही प्राप्त हो सकता है। गुरु की पहचान कठिन होती है। पूज्य चच्चा जी ने गुरु की पहचान के लिए लिखा है -

"बाहरी तौर पर गुरु की पहचान के लिए यह हो सकता है कि जो व्यक्ति जहाँ पर पैदा हुआ है, जहाँ पर उसने विद्या पाई है, अपने जीवन में उसने जो भी पेशा किया है, इन सब अवस्थाओं में उसके सदाचार व ईमानदारी में लोगों ने उनकी किस हद तक आलोचना व प्रशंसा की है।"

जिसमें स्वार्थ न हो, अहंकार न हो जो प्रेमी हो, सदाचारी हो साथ ही साथ ईश्वर भक्त भी हो। यदि ऐसा व्यक्ति संत कृपा से मिल जाय तो उसी को अपने आपको समर्पण कर देना चाहिए।

शास्त्रों व धार्मिक ग्रंथों के अध्ययन में चाहे सारा जीवन व्यतीत कर दिया जावे, बिना सद्गुरु की कृपा के उसका मर्म जान लेना कदापि सम्भव नहीं। यही गुरु तत्व है।

इस लेख में पूज्य गुरुदेव श्री भवानी शंकर जी महाराज (श्री चच्चा जी) द्वारा बताई गई साधना के फल स्वरूप जो तुच्छ अनुभव हुए हैं वह व्यक्त किये गये हैं। मुझे आशा व पूर्ण विश्वास है कि साधक लोग इससे लाभान्वित होंगे।

तुच्छ दासानुदास
काशीप्रसाद

वन्दना

सब धरती कागज करूँ लेखनि सब वनराय।
सात समुद की मसि करूँ गुरु गुन लिखा न जाय।।
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुर्साक्षात परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः।।
वर्णानामर्थ संधानां रसानां छन्द सामऽपि।
मंगलानां च कर्तारौ वन्दे वाणी विनायकौ।।
भवानी शंकरौ वन्दे श्रद्धा विश्वास रूपिणं।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धास्वान्तस्थमीश्वरम्।।
वन्दे वोधमयं नित्यं गुरुं शंकर रूपिणम्।
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वंद्यते।।

गुरु तत्व एवं ब्रह्म तत्व

गुरु तत्व ही ब्रह्म तत्व है। ब्रह्म का रूप प्रकाश है। गुरु शब्द का अर्थ है जो अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाये। अन्धकार माया है। प्रकाश ब्रह्म है। गुरु जीव को माया से हटाकर ब्रह्म की ओर ले जाते हैं। पूज्य चच्चा जी ने लिखा है "सदगुरु जैसा स्वयं होता है वैसा ही अपने शिष्य को बना देता है। गुरु कृपा के बिना कोई संसार-सागर से पार नहीं हो सकता।" रामचरित मानस में लिखा है ***"गुरु विन भवनिधि तरिअ न कोई। जो बिरंचि संकर सम होई।"***

ब्रह्म के दो रूप हैं- निराकार और साकार। निराकार ब्रह्म का न कोई रूप होता है, और न कोई आकार वह अकर्ता होता है। जब वह कर्म में प्रविष्ट होता है तब वह साकाररूप होता है। मनुष्य का शरीर व इन्द्रियाँ यन्त्रवत् हैं। ब्रह्म के प्रकाश अथवा आत्म प्रकाश से ही वह चेतन रूप में कार्य करने लगते हैं। गुरु आराधना साकार पूजा है। गुरु की आराधना से ही हम निराकार ब्रह्म को प्राप्त करते हैं। रामचरित मानस में निराकार ब्रह्म की व्याख्या निम्नलिखित रूप में की गई है। यथाः-

"विनु पद चलिअ सुनइ विनु काना। कर विन कर्म करिअ विधि नाना।।
आनन रहित अमित रस भोगी। विनु वानी वक्ता बड़ जोगी।।"

साकार ब्रह्म में विदेह अवस्था हो जाती है। विदेह होने पर उक्त स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

मनुष्य के जन्म से ही उसे गुरु की आवश्यकता होती है। बचपन में माता-पिता उसके गुरु होते हैं। विद्या प्राप्त करने के लिये विद्या-गुरु होते हैं। ज्ञान व भक्ति प्राप्त करने के लिये सदगुरु की आवश्यकता होती है। 'योगवशिष्ठ' पुस्तक के अनुसार भगवान राम बचपन में सामान्य मनुष्यों की तरह ही थे। उनको वैराग्य पैदा हो गया और घर-बार छोड़कर जंगल में जाने को तैयार हो गए। महाराजा दशरथ ने गुरु वशिष्ठ से प्रार्थना की तब उन्होंने भगवान राम को आत्मज्ञान की शिक्षा देकर आत्म-साक्षात्कार कराया और उन्होंने अपने निज स्वरूप को पहचाना। इसके पश्चात् ही उन्होंने अपनी लीला प्रारम्भ की। महाराजा जनक को गुरु अष्टावक्र जी ने आत्म साक्षात्कार कराया जिससे वह विदेह-अवस्था को प्राप्त हुये तथा राज्य का सारा कार्य ब्रह्मलीन अवस्था में करते रहे। भगवान कृष्ण भी गुरु-आश्रम में रहकर शिक्षा प्राप्त करते रहे। सदगुरु की प्राप्ति से ही आत्म-साक्षात्कार होता है, जो जीवन का चरम लक्ष्य है। सदगुरु की प्राप्ति असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। हम लोगों का परम सौभाग्य है जो हम सबको परम सन्त सदगुरु श्री भवानी शंकर जी (परमपूज्य चच्चा जी) की प्राप्ति हुई। उनकी अलौकिक महिमा का हम सबने अनुभव किया है। उनके बताये हुये मार्ग पर चलकर सभी प्रकार की अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष की प्राप्ति होती है।

योग साधना

पूज्य चच्चा जी की साधना कर्मयोग की साधना है। कर्म करते हुये अपने मन को इष्टदेवमें लगाते रहना ही कर्मयोग है। गीता में भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन को यह साधना बतलाई। गुरु द्वारा इस साधना का अभ्यास करते रहने से व गुरु कृपा से मन नियंत्रित होने लगता है। मन का यह स्वभाव है कि जिसमें वह लग जाता है, उसी रूप में वह परिवर्तित होने लगता है। इससे मन वहिर्मुखी से अन्तर्मुखी होने लगता है। गुरु का इष्ट ही सर्वोत्तम इष्ट है। गुरु प्रकाश-पुंज है। उनका ध्यान करने से आत्म प्रकाश जागृत होने लगता है तथा साधक अपने निज स्वरूप को पहचान कर उसी में स्थित रहने लगता है।

अखण्ड मण्डलाकारं व्याप्त येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः।।
अज्ञान तिमिरान्धस्य ज्ञानांजन शलाकया।
चक्षुःर्मीलतं येन तस्मै श्री गुरवे नमः।।

नाम महिमा

ईश्वर प्राप्ति के दो मुख्य साधन हैं - नाम व रूप। सबसे सरल व सुगम साधन नाम-जप है। बिना नाम के हम रूप को नहीं पहचान सकते। रामचरित मानस में लिखा है -

"रूप विशेष नाम विनु जाने। करतल गत न परहिं पहचाने।।
सुमरिअ नाम रूप विनु देखे। आवत हृदय सनेह विसेषे।।"

संत तुलसीदास जी ने कलियुग में नाम-जाप ही मुख्य साधन बतलाया है।

"कलियुग केवल नाम अधारा। सुमरि सुमरि उतरहिं भव पारा।।
नहिं कलि करम न धरम विवेकू। राम नाम अवलम्बन एकू।।"

नाम-जप से हृदय में आत्म-प्रकाश जाग्रत होने लगता है। मन को नियंत्रित करने का यह सरल उपाय है। नाम-जाप में जब रस आने लगता है तब अजपा जाप होने लगता है। साधक को स्वयं कुछ नहीं करना पड़ता। नाम जाप स्वतः निरन्तर होने लगता है तथा मन उस शब्द को सुनने को लालायित होने लगता है। पूज्य चच्चा जी ने लिखा है कि काम करते समय, उठते-बैठते, चलते-फिरते हर समय राम नाम का जाप करते रहना चाहिए। पूज्य चच्चा जी के गुरुदेव श्री लाला जी महाराज ने भी "जिक्र खफ़ी" यानी दिल के जाप की साधना करते रहने को बतलाई है। सभी धर्मों, मज़हबों व सम्प्रदायों में ईश्वर प्राप्ति के लिये नाम का ही सहारा लिया है। नाम-जाप किसी प्रकार भी किया जाये फलदायक होता है परन्तु गुरु के द्वारा नाम प्राप्त कर, विधिपूर्वक जाप करने से अलौकिक लाभ शीघ्र होने लगता है। नाम-जाप व गुरु कृपा से ही साधक को आत्म-साक्षात्कार हो जाता है तथा उसकी स्थिति 'प्रकृत्या ब्रह्मलीनो' की हो जाती है। पूज्य गुरुदेव चच्चा जी महाराज निरन्तर इसी स्थिति में रहते थे।

अहं भाव

ईश्वरीय मार्ग में सबसे बड़ा बाधक मनुष्य का अहं है। अहं का अर्थ अभिमान यानी घमण्ड से है। मनुष्य अथवा जीव ईश्वर का अंश है। रामचरित मानस में लिखा है - ***"ईश्वर अंश जीव अविनाशी। चेतन अमल सहज सुखराशी।"***

मनुष्य अपने को ईश्वर से भिन्न समझता है, इसलिये वह मनुष्य है। देहाभिमान, धन-वैभव का अभिमान, पद-प्रतिष्ठा का अभिमान तथा कर्तापन का अभिमान ही उसको मनुष्य बनाये हुये है। संकल्प-विकल्प, इच्छाओं एवं वासनाओं की पूर्ति में ही मकड़ी के जाल की तरह फँसा रहता है। स्वयं को ही

कर्ता-धर्ता व भगवान मानने लगता है। वास्तव में यह सब मिथ्या है। संसार की सभी वस्तुयें नाशवान हैं। हमारे शरीर में एक तत्व है जिसे आत्म-तत्व कहते हैं। उसी की चेतन शक्ति से हम चेतनावस्था में रहते हैं। यही गुरु-तत्व है जिसका ज्ञान कर्मयोगी सदगुरु ही करा सकता है। सदगुरु की शरणागत होने पर शेष कुछ नहीं रहता। गुरु-आज्ञा पालन ही शिष्य का कर्तव्य रह जाता है। गुरु-कृपा से हमारा अहं भाव नष्ट होकर पात्रता के गुण आने लगते हैं। पात्रता आने पर ही गुरु आत्म-साक्षात्कार करा देते हैं और साधक अपने निज स्वरूप को पहचान कर ब्रह्मलीन की स्थिति में शरीर रहते हुये विदेह अवस्था में सब कार्य करता रहता है। यही कर्मयोग की स्थिति है जो सच्चे कर्मयोगी सदगुरु से ही प्राप्त हो सकती है। परम पूज्य चच्चा जी में पूर्ण पात्रता होने पर उनके सदगुरु लालाजी महाराज की दृष्टि मात्र से ही आत्म-साक्षात्कार हो गया था। पात्रता लाने के लिये शरणागत होकर गुरु द्वारा बतायी गई साधना का अभ्यास नित्य प्रति करना आवश्यक है। साधन व अभ्यास का प्रभाव हमारे व्यवहार में नहीं आता तो वह साधना व्यर्थ है। इसके लिये साक्षी भाव से आत्म-निरीक्षण करते रहना आवश्यक है। गलतियाँ व अपराध होने पर नाम-जाप द्वारा प्रायश्चित करना चाहिए। साधना, इच्छाओं की पूर्ति के लिये नहीं, ईश्वर-प्राप्ति के लिये होना चाहिए।

उपर्युक्त विचार पुस्तकीय नहीं हैं। पूज्य चच्चा जी द्वारा बताई गई साधना के अभ्यास के फलस्वरूप जो मुझे तुच्छ अनुभव हुये हैं, उन्हें प्रकट किया गया है। पुस्तकों का उल्लेख विचारों की पुष्टि के लिये ही किया गया है। किसी चीज का अनुभव होने पर ही उसकी सत्यता प्रकट होती है। अतः गुरु द्वारा बतायी गई साधना का अभ्यास नियमित रूप से निरन्तर करते रहना चाहिए। इसके अभ्यास से कुछ समय में अभ्यास स्वतः होने लगता है। साधक साक्षी-भाव से देखता रहता है। उसकी स्थिति इस प्रकार हो जाती है। यथा -

"जग पेखन तुम्ह देखन हारे। विधि हर संभु नचावन हारे।।
तेहि न जानिअ मरमु तुम्हारा। और तुम्हहि को जानन हारा।।
सोइ जानिअ जिहि देहु जनाई। जानत तुम्हहिं तुम्हहि है जाई।।"

प्रेम साधना

गुरु तत्व का मुख्य अंग प्रेम है। साधना व नाम-जाप से हृदय में अपने इष्ट देव के प्रति इतना अधिक प्रेम होने लगता है कि साधक को सर्वत्र जगत प्रेममय दिखाई देने लगता है तथा उसकी स्थिति *"सियाराम मय सब जाग जानी। करहुं प्रणाम जोरि जुग पानी।"* जैसी हो जाती है। भगवान शंकर ने भी अपना अनुभव बताते हुये कहा है - ***"हरि व्यापक सर्वत्र समाना। प्रेम ते प्रगट होहिं मैं जाना।"*** पूज्य गुरुदेव चच्चा जी महाराज को पूज्य लाला जी द्वारा जब आत्म साक्षात्कार हुआ था, उस समय पूज्य चच्चा जी को सर्वत्र प्रकाश ही प्रकाश दिखाई देता था तथा पूज्य लाला जी के ही उनको दर्शन होते रहते थे। मीराबाई, शबरी, प्रहलाद आदि की यही अवस्था रही थी। प्रेम भाव जाग्रत होने पर मन के सारे मैल, काम, क्रोध, लोभ, मोह, राग, द्वेष, छल-कपट इत्यादि धुल जाते हैं तथा मन शीशे की भाँति निर्मल हो जाता है। उसमें अपने इष्टदेव की मूर्ति दिखाई देने लगती है। श्री रामचरित मानस में लिखा है - ***"निर्मल मन जन सोइ मोहि पावा। मोहि कपट छल-छिद्र न भावा।"*** एवं ***'दिल के आइने में है तस्वीरे यार। जब जरा गर्दन झुकाई देख ली।'*** प्रेम में साधक को अपनी देह का भान नहीं रहता। वह विदेह-अवस्था को प्राप्त हो जाता है। गोपियों की यही अवस्था थी। इसमें द्वैत भाव खतम होकर अद्वैत में पहुँच जाते हैं। राधा मातेश्वरी के बारे में लिखा है - ***"श्याम श्याम कहत राधे राधेश्याम भई। पूँछत निज सखियन से राधे कहाँ गई।"*** एवं ***"प्रेम जगत में सार और कुछ सार नहीं है।"*** गुरु द्वारा बताई गई साधना, नाम-जाप, अभ्यास, शरणागति व गुरु-कृपा से हृदय में प्रेम उत्पन्न होने लगता है तथा साधक उक्त स्थिति को प्राप्त हो जाता है।

मन की आराधना

आत्मसाक्षात्कारता, ब्रह्मलीनता तथा विदेह अवस्था मन के शान्त होने, पात्रता आने तथा गुरु-कृपा से ही प्राप्त होती है। शरीर में मन ही ऐसा यंत्र है जो मनुष्य को ऊँचे से ऊँचे और नीचे से नीचे पहुँचा सकता है। विचार शून्य होने पर मन की स्थिति शून्य की हो जाती है। ब्रह्म की स्थिति भी शून्य की ही है। उसमें एक से अनेक होने की लहर पैदा हुई जिससे सारे ब्रह्माण्ड की रचना हुई, लेकिन उसमें अकर्तापन व निर्लिप्तता रही जिससे वह अपने निज स्वरूप शून्य में ही स्थित रहा। मनुष्य में देहाभिमान के कारण मन में संकल्प-विकल्प, इच्छायें, वासनायें रूपी लहरों के उठते ही वह उसी में अपने को लीन कर लेता है, यह आकर्षण ही मोह का कारण है। सदगुरु के वचनों से मोह नष्ट हो जाता है। जैसा कि श्री रामचरित मानस में लिखा है -

"बन्दुह गुरु पद कंज कृपा सिन्धु नररूप हरि।
महा मोह तम पुंज जासु वचन रवि कर निकर।।"

मन इन्द्रियजन्य इन विषय-वासनाओं के भोग में लग जाता है। अतः वह अपने निज स्वरूप को भूल जाता है जैसा कि अनुभव किया गया है - "विचारों के बवण्डर को रोककर मन स्थिर करने से आत्म-दर्शन स्वतः होने लगता है।"

मन की शान्ति ही मोक्ष है। इच्छाओं-वासनाओं के वशीभूत न होकर ईश्वर की इच्छा में ही अपनी इच्छा मिलाकर चलने से मन शान्त हो जाता है तथा साधक साक्षीभाव से निर्लिप्त होकर देखता रहता है, यही निष्काम भाव है। शरीर के अन्त होने पर और सब चीजें नष्ट हो जाती हैं, मन ही आत्मा के साथ रहता है। अन्त समय में मन में जो भाव होते हैं, उनको भोगने के लिये ही पुनर्जन्म लेना पड़ता है। गीता में भगवान कृष्ण ने कहा है -

"अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति स मदभाव याति नास्त्यत्र संशयः।।"

अर्थात् अन्त समय में जो ईश्वर को स्मरण करता हुआ शरीर छोड़ता है, वह ईश्वर को ही प्राप्त होता है। अतः मन को असत, धन-पदार्थों, शरीर इन्द्रिय के भोगों तथा झूठे नातों से हटाकार गुरु-चरणों व नाम-जाप के अभ्यास में लगाते रहना चाहिये ताकि अन्त समय इसी का ध्यान रहे।

जितने साधन व अभ्यास किये जाते हैं, वह सब मन को शान्त रखने के लिये ही किये जाते हैं। गुरु द्वारा बताई गई साधना भी मन की ही साधना है। इसी के अभ्यास से मन शान्त होकर आत्मसाक्षात्कारता, ब्रह्मलीनता, शून्यावस्था, निर्लिप्तता व निज स्वरूप की स्थिति को प्राप्त होता है। गुरु-चरणों में मन लगाने से व नाम-जाप तथा गुरु-कृपा से मन स्थिर होकर आत्म-स्थिति में रहने लगता है। श्री रामचरित मानस में लिखा है -

"श्री गुरु पद नख मनि गन जोती। सुमरित दिव्य दृष्टि होती है।।"

सदाचार

आध्यात्मिकता का व्यवहारिक स्वरूप ही सदाचार है। यही व्यावहारिक अध्यात्म है। भगवान राम सदाचारी पुरुष थे इसीलिये वह सबके पूजनीय थे। परम पूज्य चच्चाजी की साधना भी सदाचार पर ही आधारित है। सदाचार में सारे ईश्वरीय गुण निहित रहते हैं। प्रेम, दया, क्षमा, सद्व्यवहार, विनम्रता, निःस्वार्थता, परोपकार, परदुखकातरता के लक्षण ही सदाचारी पुरुष के लक्षण हैं। यही पात्रता के गुण हैं। सदाचारी पुरुष ही कर्मयोगी सन्त होता है। सारी साधनाऐं अवगुणों को हटाने तथा सद्गुणों को प्राप्त करने के लिए की जाती हैं। मनुष्य ईश्वर का अंश होने के कारण उक्त सद्गुणों से परिपूर्ण रहता है।

कुसंगति में पड़कर उसमें दुर्गुण आने लगते हैं। अतः सत्संग, गुरु-शरणागत तथा नाम-जाप एवं आत्म निरीक्षण द्वारा मन को पवित्र विचारों से ही निर्मल बनाने का अभ्यास करने से सदाचारिता के गुण आने लगते हैं, यही जीवन जीने की कला है। गुरु पर अगाध श्रद्धा रखने तथाआत्म प्रकाश जागृत होने लगता है तो सभी दुर्गुण नष्ट हो जाते हैं। रामायण में लिखा है-

"जब ते राम प्रताप खगेशा। उदित भयऊ अति प्रबल दिनेशा।।
पूरि प्रकाश रहहिं तिहु लोका। बहुतन सुख बहुतन मन शोका।।
जिनहिं शोक ते कहों बखानी। प्रथम अविद्या निशा नशानी।।
अघ उलूक जहँ तहाँ लुकाने। काम क्रोध कैरव सकुचाने।।
मत्सर, मान, मोह, मद चोरा। इन कर हुनर न कबनहुँ ओरा।।
विविध कर्म गुण काल स्वभाऊ। यह चकोर सुख लहहिं न काहू।।
धर्म तड़ाग ज्ञान विज्ञाना। यह पंकज विकसे विध नाना।।
सुख संतोष विराग विवेका। विगत शोक यह कोक अनेका।।
दोहा यह प्रताप रवि जाके, जब उर करहिं प्रकाश।
पाछे बाढ़हिं प्रथम जे, कहे ते पावहिं नाश।

सदाचार आश्रम

सदाचार आश्रम ६२८, राजेन्द्र नगर की स्थापना सन् १६८४ ई. में हुई थी। पूज्य गुरुदेव चच्चा जी महाराज की मूर्ति का विचार सत्संगी भाइयों द्वारा उनके देहावसान के पश्चात् समाधि-स्थल पर लगाने का हुआ था। मूर्ति जयपुर से बनने पर विरोधाभास के कारण समाधि-स्थल उरई पर नहीं लग सकी। अन्त में पूज्य भाई साहब कृष्णदयाल जी की प्रेरणा और पूज्य चच्चा जी की स्वयं इच्छा से इस मूर्ति की स्थापना लखनऊ में उक्त स्थान पर की गई। अतः इसका नाम "सदाचार-आश्रम" रक्खा गया। यहाँ सुबह-शाम आरती व ध्यान आदि करने की व्यवस्था है। प्रत्येक रविवार को सामूहिक सत्संग होता है। इस मूर्ति के दर्शन मात्र से ही लोगों की इच्छाओं की पूर्ति व कष्ट दूर होते हैं। भारतवर्ष में मूर्ति-पूजा युगों से चली आ रही है। भगवान राम ने त्रेता युग में शिवलिंग की स्थापना की थी। हर धर्म व सम्प्रदायों में मन्दिर, मसज़िद, समाधि-स्थल, दरगाह इत्यादि बनाये गये हैं। पूज्य चच्चा जी ने अपने परम भक्त सेठ लालूराम की मूर्ति बनवाकर उनका मन्दिर बनाने का आदेश उनके निवास-स्थान ग्राम परासन (जिला जालौन) में लगाने का दिया था तथा उनकी आज्ञानुसार सेठ जी की मूर्ति ग्राम परासन में लगाकर उनका मन्दिर बनाया गया है। इसी भावना से

सदाचार आश्रम

राजेन्द्र नगर, लखनऊ

मुख्य प्रवेश द्वार

प्रेरित होकर पूज्य चच्चा जी की मूर्ति की स्थापना की गई। मन साकार पर ही टिकता है। मूर्ति पूजा भी साकार पूजा है। मन को स्थिर करने के लिये, मूर्ति को हृदय में स्थापित करके अभ्यास किया जाये तो आध्यात्मिक-मार्ग में उन्नति होने लगती है।

ध्यान मूलं गुरुर्मूर्ति पूजा मूलम गुरुर्पदम्।
मंत्र मूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरु कृपा।।

पूज्य चच्चा जी की स्मृति में सदाचार आश्रम, लखनऊ में प्रति वर्ष दीपावली के पश्चात् पंचमी को उनके जन्म दिन पर विशाल समारोह एवं भण्डारा आयोजित किया जाता है। इसके अतिरिक्त वसन्त पंचमी को इलाहाबाद में, राम नवमी व निर्वाण-दिवस पर समाधि-स्थल (कोंच रोड) उरई में तथा गुरु-पूर्णिमा व दशहरे पर उनके निवास-स्थान मुहल्ला चन्द्रनगर उरई में कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं। ग्वालियर में परम पूज्य चच्चा जी के तृतीय पुत्र डॉ. स्वामी जी द्वारा, वृन्दावन(मथुरा) में पूज्य चच्चा जी के चतुर्थ पुत्र डॉ. कृष्ण जी द्वारा एवं [redacted] में श्री कृष्ण दयाल जी द्वारा समय-समय पर सत्संग के कार्यक्रम सम्पन्न होते रहते हैं। पूज्य चच्चा जी के निवास-स्थान (चन्द्रनगर, उरई) के कार्यक्रम परम सन्त परम पूज्य चच्चा जी के ज्येष्ठ पुत्र डॉ. जयदयाल जी के संरक्षण में तथा शेष स्थानों पर पूज्य चच्चा जी के द्वितीय सुपुत्र परम सन्त श्री कृष्णदयाल जी के संरक्षण एवं कार्य निर्देशन में सम्पन्न कराये जाते हैं। परम सन्त श्री कृष्णदयाल जी चच्चा जी के स्वरूप में स्थित रहकर सबके कल्याण के लिये सतत् प्रयत्नशील रहते हैं। प्रेम, दया, सेवा-भाव, क्षमा, सदाचार, विनम्रता आतिथ्य-सत्कार, परोपकार व परदुखकातरता उनके सहज गुण हैं। उनके सम्पर्क में जो आता है, वह स्वतः ही उनकी ओर आकर्षित होने लगता है। वह पूर्ण कर्मयोगी सन्त हैं। व्यावहारिक आध्यात्म ही उनका आदर्श है। परम पिता परमात्मा सदगुरु देव से प्रार्थना है कि वह उन्हें स्वस्थ और चिरायु रक्खे जिससे हम सबका आध्यात्मिक-उत्थान व मार्ग-दर्शन होता रहे।

ऊँ शान्ति ! ऊँ शान्ति !! ऊँ शान्ति !!!

श्री गुरुदेव जय गुरुदेव सत् गुरुदेव जय जय गुरुदेव !

- तुच्छ दासानुदास

काशीप्रसाद

भावाञ्जलि

रचयिता :

काशी प्रसाद श्रीवास्तव

मन तू रामनाम रस पी ले।
गुरु चरनन में ध्यान लगा के, शब्द सुरति गह लीजे।।
सोच विचार त्याग दे उर से, सकल वासना तज दे।
परम प्रकाश रूप लख-लख के, प्रेमाश्रु जल भर ले।। मन. . .
तन धन का मद मोह त्याग दे, कर्तापन का गर्व मिटा दे।
शरनागत का भाव जगाकर, आत्मसाक्ष्य कर ली जे।। मन. . .
मानव तन दुर्लभ है जग में, व्यर्थ नष्ट मत कीजे।
सतगुरु की पतवार थामकर, भव-सागर तर लीजे।। मन. . .

मन ! तू करले गुरु से प्यार।
जिनकी कृपा-दृष्टि से ही बस, खुल जाते सब द्वार।। मन तू . .
होती है परतीति सनातन, उमगे प्रीति अपार।
बहे अश्रु-धारा गंगा-सी, मन-इन्द्रिय के पार।। मन तू . . .
तेरे प्रीतम द्वार खड़े हैं, दर्शन है साकार।
हम तुम दोनों एक रूप हैं, कहें पुकार-पुकार।। मन तू . . .
मिलकर दीप जला ले उर का, चेतन रूप प्रकाश।
सदगुरु शाश्वत ब्रह्म रूप हैं, यही बात है सार। मन तू . . .
जड़-चेतन सब जीव जगत में, अगणित अपरम्पार।
सब में चेतन एक वही है, नहीं और आकार।। मन तू . . .
वही ब्रह्म में, वही पिण्ड में, फिर क्या सोच-विचार।
'पागल' की बस एक लगन है, पड़ा रहूँ गुरुद्वार।। मन तू . . .

तेरे कदमों में आ करके बता दो फिर कहाँ जाऊँ ?
दिया था प्यार जो तुमने बता दो वह कहाँ पाऊँ ?
भटकता था मैं राहों में मिले थे एक तुम रहवर।
दिखाई रोशनी तुमने वह सूरज मैं कहाँ पाऊँ ?
न देखा कौन कैसा है, लगाया था गले तुमने।
भला ऐसा दयालु फिर कहाँ ढूँढूं कहाँ पाऊँ ?
टपकता प्रेम वाणी से झलकता नेह नयनों से,
भरा दिल प्यार से ऐसा पिता तुम-सा कहाँ पाऊँ ?
कहूँ क्या उनकी बाहों को लुटाते जिसने जो चाहा।
भला दानी जहाँ में तुम सरीखा मैं कहाँ पाऊँ ?
थे करते दानभक्ति का, सदा ले पाप औरों के।
पकड़ के हाथ अधमों का, पतित पावन कहाँ पाऊँ ?
थे तुम भण्डार शक्ति के, बने थे प्रेम की मूरत।
जो आता मस्त बन जाता, वो साकी मैं कहाँ पाऊँ ?
निकलती ज्योति कदमों से, जला देती गुनाहों को।
दिखाती रूप मन मोहन वो सूरत मैं कहाँ पाऊँ ?
कहाँ तक गायेगा 'पागल' तू महिमा उन गुरुवर की।
बने थे प्रेम की मूरत, वो प्रेमी मैं कहाँ पाऊँ ?

मालिक तेरी रज़ा रहे और तू ही तू रहे।
वाकी न मैं 'रहूँ न मेरी आरजू रहे'।।
जब तक वदन में जान रगों में लहू रहे।
तेरी ही याद और तेरी जुस्तजू रहे।।
दिल में रहे हो फिर भी परदा किये रहे।
मेरी खुदी मिटा दे, फिर तू ही तू रहे।।

यही है तमन्ना कि पागल रहूँ मैं, तेरे प्यार को बस सँजोता रहूँ मैं।
घटे न कभी बस तेरे प्यार का रस, पिलाता रहे तू औ पीता रहूँ मैं।। यही..
मिष्ठान्न, भोजन तेरे नाम में है, खिलाता रहे तू औ खाता रहूँ मैं।।
तेरे नाम की बस रटन ऐसी होवे, पपीहा सरीखी लगन में रहूँ मैं।। यही..
बना दो मुझे प्यार से ऐसा 'पागल' जहाँ में तुझे देखता ही रहूँ मैं।
न मैं ही रहूँ बस यही ख्याल हरदम, जगाता रहे जागता ही रहूँ मैं।। यही..

नहीं जानता हूँ कि बस प्रेम क्या है, तरीका ये मिलने का बतला रहा है।
न होगी खुशी उतनी मिल करके, तुझसे, मज़ा तेरी चाहत में जो आ रहा है।।

ये मिलने की तड़पन मैं कैसे बताऊँ, बहे अश्रु धारा मैं कैसे बताऊँ।
अलग करके मछली को पानी से देखो, मिलन का नज़ारा नज़र आ रहा है।।

जो पूछो चकोरी से क्या मिल रहा है, लगी है टकी बस यही भा रहा है।
लगाकर टकी ऐसी खुद भी तो देखो, तो खुद में खुदा ही नज़र आ रहा है।।

नदी से भी पूछो कहाँ जा रही हो, उछलती-फुदकती बही जा रही है।
उमंगों उमंगों से यह कह रही है, मिलन की तमन्ना का रस आ रहा है।।

जरा देखो चातक को क्या कह रहा है, रटन में लगा है सदा अपने 'पीउ' के।
कहे जा रहा है कहे जा रहा है, रटन में ही उसको दरश आ रहा है।।

रहूँ ऐसा 'पागल' कि मजनू था जैसा, कि पत्थर में उसको वही भा रहा है।
खतम 'मैं' का परदा अगर कोई करदे, तो उसकी नजर में वही आ रहा है।।

कहाँ जा रहा हूँ किधर जा रहा हूँ,
न मुझको पता है, मैं कैसे बताऊँ।
यही सूझता है, बढ़ा जा रहा हूँ,
सहारा है तेरा, मैं कैसे बताऊँ।।
न यह जा रहा है, न मैं जा रहा हूँ,
यह उद्‌गार दिल के मैं कैसे बताऊँ।
चली जा रही है वो वारिधि से मिलने,
उमंगे कहो उसकी कैसे बताऊँ।।
यही सत्य है बस कि सब जा रहा है,
प्रीतम से मिलने मैं कैसे बताऊँ।
बनबस मैं "पागल" कहे जा रहा हूँ,
तेरा हूँ बस यह मैं कैसे बताऊँ।।

कहूँ मैं कैसे मन की बात,
प्रीति के संग चला जा रहा हूँ, पकड़े उनके हाथ।
कहूँ मैं कैसे मन की बात।
गिर कर उठता, उठ कर गिरता, कबहुँ न छोड़त साथ,
ऐसी कृपा कहो को करि है, प्रेम न हृदय समात।
कहूँ मैं कैसे मन की बात।
"पागल" को सब धन्य करत हैं, यही सत्य है बात
बन कर "पागल" राम नाम में अश्रु बहे दिन रात।
कहूँ मैं कैसे मन की बात

भर दो दिल में ऐसा प्यार,
मन मन्दिर में ज्योति जला के, बहे अश्रु की धार।
भर दो दिल में ऐसा प्यार,,
घृणा भाव की छाप मिटा दो, समदर्शी का भाव जगा दो।
कण-कण में तेरी आभा का दर्शन हो साकार।
भर दो दिल में ऐसा प्यार,,
"पागल" की मति ऐसी कर दो, रहे एक आधार।
प्रेम जगत में विचरण करता, पहुँचे "गुरु" दरवार।
भर दो दिल में ऐसा प्यार।

बहारें यह कहकर चली जा रही हैं,
मिलन की वह बेला चली आ रही है।
हटा दे तूँ परदा अहं भाव का बस,
तेरे सामने रोशनी बह रही है।।
बहारों से पूँछो कहाँ जा रही हो,
कहेंगी कि मिलने चली जा रही है।
उमड़ती इठलती छुपी जा रही है,
इस छुपन में तेरी शकल जा रही है।।
बता दो तुम्ही अब कि छिपने में क्या है,
वह क्या राज है जो बताये न बनता।
देखो जरा तुम भी मन को छिपाकर,
शकल आइने में तेरी आ रही है।।
"पागल" यह कहता कि चोरी छिपी में,
भरा राज दुनियाँ के करतार ने है।
वह खुद भी है बैठा छिपाये स्वयं को,
शरम पर यह तेरी हंसी जा रही है।।

मन तू नाचे जैसे मोर।
मतवाली दुनियाँ हो जावे, सुन कर तेरा शोर। मन तू . . .
जीवन ज्योति लखै घट भीतर, एक टक रहे निहोर।
मोर विभव हो अश्रु बहाते, मिले प्रभु का छोर। मन तू . . .
नाचत नाचत 'पागल' बन जा, तन मन की सुध छोर।
दरश करे गुरु के उर भीतर, होकर आत्म विभोर। मन तू . . .
मतवाली दुनियाँ हो जावे, सुनकर तेरा शोर।। मन तू . . .

नहीं जानता हूँ तेरा रूप क्या है,
हो दर्पण ही मैला, दिखाई दे क्या है।
बस है एक ज्योति सभी ने है माना,
किये है जगत को प्रकाशित यह जाना।
कहाँ से यह आती कहाँ है वह जाती,
बता दो कि इसमें तेरा राज क्या है ?
उमा ने भी पूँछा था शंकर से भ्रम वश,
बता दो कि हे नाथ ! वह रूप क्या है ?
कहा था उन्होंने प्रकाशित जगत है,
प्रकाशक है राम न पूँछो कि क्या है ?
हैं मुस्लिम बताते कि नूरे खुदा है,
बताते हैं ईशा कि बस रोशनी है।
गुरु से ही मिलती है, सिक्खों को ज्योति,
यही सार है बस सिवा इसके क्या है ?
जो पूछो कि "पागल" तेरी राय क्या है ?
कहेगा यही बस कि तू भज ले गुरु को।
यही रास्ता है उसे देखने का,
न मेरा न तेरा, भला और क्या है ?

कहो मुझको पागल यही आरजू है,
मैं पा जाऊँ 'गल' बस यही आरजू है।
रहूँ प्रेम में बस तेरे ऐसे बिह्वल,
थी मीरा भी जैसी, यही आरजू है।।
नचूँ होके तन्मय, तेरा नाम गाकर,
लगूँ बस गले अब, यही आरजू है।
जो देखे मुझे तो कहें सब यही बस,
बनो ऐसे "पागल" यही आरजू है।।

मन तू कर ले गुरु से प्यार।
जिनकी कृपा दृष्टि से ही बस खुल जाते सब द्वार।
मन तू कर ले गुरु से प्यार।
होती है परतीत सनातन, उमगे प्रीति अपार।
बहे अश्रु धारा गंगा सी, मन इन्द्रिय के पार।
मन तू कर ले गुरु से प्यार।
तेरे प्रीतम द्वार खड़े हैं, दर्शन हैं साकार।
हम तुम दोनों एक रूप हैं, कहें पुकार पुकार।
मन तू कर ले गुरु से प्यार।
मिल कर दीप जला ले उर का चेतन रूप प्रकाश।
सद्गुरु शाश्वत ब्रह्म रूप है यही बात है सार।
मन तू कर ले गुरु से प्यार।
जड़ चेतन सब जीव जगत में, अगणित अपरम्पार।
सब में चेतन एक वही है, नहीं और आकार।
मन तू कर ले गुरु से प्यार।
वही ब्रह्म में वही पिंड में, फिर क्यों सोच विचार।
"पागल" की बस एक लगन है, पड़ा रहूँ गुरु द्वार।
मन तू कर ले गुरु से प्यार।

जो पकड़ा हाथ है तुमने, छुड़ा कर जाओगे कैसे।
मैं कर दूँगा तुम्हें बदनाम, कि तुम हो वेवफा कैसे।
यह कहते हैं कि तुम सब जानते हो कौन है कैसा।
तो फिर अब देख कर मेरे गुनाहों से हटे कैसे।
समझते हो कि दुर्बल हूँ न कोई और है मेरा।
न सुधि लेते अनाथों की बने हो नाथ फिर कैसे।
हँसे थे देख कर मुझको, थी कैसी दिल्लगी तेरी।
उठेगी बाँह जब मेरी, सहोगे तुम भला कैसे।
न समझो भाग जाऊँगा मैं तेरी बेरुखाई से।
मिटा हस्ती को फिर देखूँ कि तुम ना आओगे कैसे।
सुना है तुम छुपे रहते हो, जग से शर्म खाते हो।
चले आते हो बस में प्रेम के, हो बेहया कैसे।
कहे "पागल" बना सरताज हूँ मैं सब गुनाहों का।
फिर पकड़ा हाथ क्यों तुमने, फिदा तुम हो गये कैसे।

गुरु पद रज वन्दन करता हूँ ले श्रद्धा के फूल।
नत मस्तक हो गुरु चरणों में करता भूल कबूल।
जन्म जन्म के कर्मों वश मैं गया प्रभू को भूल।
सद्गुरु कृपा मिली है जबसे, ज्योति मिली अनूप।
ना मैं समझूँ ना मैं जानूँ क्या है तेरा रूप।
गुरु रूप में दर्शन होते तीनों देव स्वरूप।
"पागल" की बस यही कहन है मत हो मद में चूर।
गुरु चरणों की शरण गहे तो तुझे मिलेगा नूर।।

तेरे कदमों में जाकर के बताओ फिर कहाँ जाऊँ।
दिया था प्यार जो तुमने, बताओ वो कहाँ पाऊँ।
भटकता था मैं राहों में, मिले तुम एक थे रहवर।
दिखाई रोशनी तुमने, वो सूरत मैं कहाँ पाऊँ।
न देखा कौन कैसा है, लगाया था गले तुमने।
भला ऐसा दयालु फिर कहाँ ढूढ़ूँ कहाँ पाऊँ।
टपकता प्रेम वाणी से, झलकता नेह नैनों से।
भरा दिल प्यार से ऐसा, पिता तुम सा कहाँ पाऊँ।
थे तुम भण्डार शक्ति के, बने थे शान्ति की मूरत।
जो आता मस्त बन जाता, वो शाकी मैं कहाँ पाऊँ।
कहें क्या उनकी बाहों को, लुटाते जिसने जो चाहा।
पकड़ते हाथ अधर्मों का, पतित पावन कहाँ पाऊँ।
थे करते दान भक्ति का, सदा ले पाप औरों के।
भला दानी जहाँ में तुम सरीखा फिर कहाँ पाऊँ।
निकलती ज्योति कदमों से, जला देती गुनाहों को।
दिखाती रूप मनमोहन, वो सूरत मैं कहाँ पाऊँ।
कहाँ तक गायेगा "पागल" तू महिमा उन गुरुवर की।
बने थे प्रेम की मूरत, वो प्रेमी मैं कहाँ पाऊँ।

दिल में बैठे हो तुम फिर भी न कुछ कहते हो
मौन धारण किये हो क्या तुम ऐसा कुछ लगते हो
प्रेम के वाणों से बेधूँगा तुम्हें देख लेना
फिर तो बोलोगे भला चुप कहाँ रह सकते हो।
प्रेम का तीर कलेजे में, जब चुभेगा तुम्हें
होंगे बैचेन न सह सकोगे तुम
मौन तोड़कर फिर कहोगे तुम ऐसे
ले चलो मुझको जहाँ ले जा सकते हो
तुमको ले जाके जहाँ में यह दिखा दूँगा
डरके तुम भी फिर कहोगे यही
तुम जो माँगो वही ले सकते हो
बन गया काम बस इस "पागल" का
कहूँगा बस कि अब भव पार को
सहारा दोगे तुम निज हाथों का
कहोगे बस कि तुम आ सकते हो।

दुनियाँ बनाने वाले, अपना पता बताओ,
तेरा मकां कहाँ है, कुछ तो निशाँ बताओ।
देखा न मन्दिरों में, पाया न मस्जिदों में,
रहते हो फिर कहाँ तुम, वो आशियाँ दिखाओ
सब मानते हैं जग में, तेरा है बस पसारा,
परदे में क्यों छिपे हो, परदा जरा उठाओ।
आकाश में चमकते, वे सूर्य चन्द्र तारे,
रोशन जहाँ से होते, वह रोशनी दिखाओ।
जप योग ध्यान साधन, करके न तुझको पाया,
पाऊँ तुझे मैं कैसे, है कोन विधि सिखाओ।
पावे पता वही जो, गुरु की शरण में जाता,
मिलती है राह सच्ची, फिर क्या पता लगाओ।
"पागल" को मिल गया है, बस एक यह सहारा,
पाऊँगा तेरा दर अब, शंका न मन में लाओ।

कहते हैं ईश भी यह होगा वही हमारा,
लेगा शरण जो गुरु की, सच्चा है वह सहारा।
है शून्य रूप प्रभु का, गुरु रूप ही है चेतन,
दृष्टि से जिनकी केवल, होता है ज्ञान सारा।।
वह कौन सी थी शक्ति, जिससे धनुष था तोड़ा,
बस ध्यान था गुरु का, जो राम ने सँवारा।
रावण को मार करके, यह राज था बताया,
गुरु की कृपा से हमने, रण में दनुज को मारा।।
ब्रह्मा भी है गुरु में, विष्णु भी है गुरु में,
शंकर है रूप गुरु का, हो ब्रह्म जग पसारा।
सब साधनों से बढ़ कर, है ध्यान बस गुरु का,
हो लीन गुरु चरण में, पावें दरस तुम्हारा।।

देखें सपने नाना प्रकार हम मोह, नींद में पड़े हुए।
आशा तृष्णा की लहरों में जग के सब प्राणी बहे हुए।
तेरा मेरा है वही भाव जो भिन्न रूप दिखलाते हैं।
बस नींद खोलकर देखो तो सब एक रूप में रमे हुए।
तेरा मन भी न देगा साथ जग में सब स्वार्थ लगाते हैं।
है त्याग भाव ही ऐसा बस जिससे हम प्रभु से जुड़े हुए।
इस मोह निशा से जगने का है त्याग मन्त्र ही उजियारा।
मिलता स्वरूप है संतों का जो त्याग भाव में लगे हुए।
इसका मतलब यह ना समझो घर-बार छोड़कर जाना है।
निःस्वार्थ कर्म करते रहना मन गुरु चरणों में बँधे हुए।
कर्ता समझो बस एक वही जो चेतन रूप दिखाता है।
अपनापन हमें त्यागना है बस प्रेम अश्रु जल भरे हुए।

कहते हैं ज्ञान किसको, यह बिरले ही जान पाये।
जिसको जना दें गुरु जन, उसे और कुछ न भाये।।
सारा जगत है चेतन, जिस एक के सहारे।
होते विलग ही जिसके, निर्जीव होते सारे।।
बस है अहं का परदा, जो मूढ़ है बनाये।
देखो तो उर में 'पागल', किसमें हैं यह समाये।।
कोई समझ ले इतना, है कौन जग चलाये।
फिर ज्ञान उसको आकर, खुद ही गले लगाये।।

है टेर कौन सी वह, जिसको तुम्हें सुनाऊँ।
सुनकर जिसे हो व्याकुल, वह कौन गीत गाऊँ।।
फिरता हूँ काम वश मैं, माया से तेरी घिरकर।
तुम्ह ही बता दो गुरुवर कैसे मैं सब छुड़ाऊँ।।
मद मोह कामना वश जाता हूँ भूल तुमको।
है कौन सी विधी वह, जिससे तुम्हें रिझाऊँ।।
उर में हो ध्यान तेरा, जिह्वा पे नाम हो बस।
दो प्रेम मन्त्र ऐसा, मन को जिसे सुनाऊँ।।
बन जाऊँ ऐसा "पागल" फिर प्रेम रस मैं पीकर।
तेरा ही रूप पाकर, भव सिन्धु पार पाऊँ।।

मेरो मन निर्मल कैसे होय, प्रभु जी साधन बतला दो,
प्रभु जी साधन बतला दो।
काम क्रोध की काई लगी है, मन तरंग की बाढ़ चढ़ी है,
दशा कवन विधि रोय, प्रभु जी साधन बतला दो।
मेरो मन निर्मल कैसे होय, प्रभु जी साधन बतला दो।
सत रज तम के फूल खिले हैं, मोह फाँस के जाल पड़े हैं,
मान करै न बिछोह, गुरु जी साधन बतला दो।।
आशा तृष्णा सर्प डसत है, दम्भ मान के मगरमच्छ हैं,
मन स्थिर कैसे होय, प्रभु जी साधन बतला दो।।
विषय भोग की मीन फिरत है, राग रूप कच्छप तैरत है,
मेरो मन निर्मल कैसे होय, प्रभु जी साधन बतला दो।।
मेरो मन निर्मल कैसे होय, प्रभु जी साधन बतला दो,
गुरु जी साधन बतलादो।।
गुरु चरनन की शरण में जाकर, दीन भाव से शीश नवकर,
करै क्षोभ अस रोय, प्रभु जी साधन बतला दो।।
रो रो कर तूँ बेसुध हो जा, नाम रटन मैं तूँ है खोजा,
जस शिशु बालक रोय, प्रभु जी साधन बतला दो।।
द्रवित होंयेगे रोना सुनकर, तुझे मनायें गले लगाकर,
गुरु कृपा अस होय प्रभु जी साधन बतला दो।।
छल और कपट के मैल भरे हैं, द्वेष भाव के झाड़ खड़े हैं,
मन दर्पण कस होय, प्रभु जी साधन बतला दो।।
प्रेम अश्रु की धार बहै जब, मन के मैल धुले बस सब तक,
अस निर्मल मन होय, प्रभु जी साधन बतला दो।।
"पागल" हो जा यह कह कह कर, मन निर्मल हो पान करत जब,
गुरु चरनन रज धोय, प्रभु जी साधन बतला दो।।
मोरा मन निर्मल कैसे होय, प्रभु जी साधन बतला दो।।

ऐसी दृष्टि देव प्रभु उर में, समदर्शी हो जाऊँ,
अन्तर्मुख हो शक्ति रूप गह, दरश तिहारा पाऊँ।
ऐसी दृष्टि देव प्रभु उर में, समदर्शी हो जाऊँ,
रहे न कोई इच्छा मन में, हर्ष, शोक नहिं भाऊँ।
कर्मों का नित अर्पण करके कर्मयोगि गति पाऊँ,
ऐसी दृष्टि देव प्रभु उर मे समदर्शी हो जाऊँ।
सबमें तेरा रूप लखूँ मैं, बहिर्मुखी मिट जाऊँ,
ध्यान रहे न निज शरीर का, हो विदेह गुरु ठाऊँ।
ऐसी दृष्टि देव प्रभु उर में, समदर्शी हो जाऊँ,
रिद्धि सिद्धि और विपुल बड़ाई, "पागल" कछू न चाहूँ।
पड़ा रहूँ बस गुरु चरणों में, निज स्वरूप मैं पाऊँ।
ऐसी दृष्टि देव प्रभु उर में, समदर्शी हो जाऊँ।।

कहूँ क्या सेवक की अस बात, रहे मन सतगुरु के संग साथ।
नहिं कुछ लेता, नहिं कुछ देता, भला चहे दिन रात, कहूँ क्या सेवक की. . .
करता सेवा जग की ऐसे, होकर पुलकित गात,
भरा रहे आनन्द से हरदम, प्रेम न हृदय समात, कहूँ क्या सेवक की. . .
मन बच कर्म से अर्पित करके, रह जस जल जलजात,
शीश नवाकर, हाथ जोड़कर, गुरु आज्ञा को ललात, कहूँ क्या सेवक की. . .
एक टक लेके गुरु चरनन को, कबहुँ कहूँ नहिं जात,
जस बन करके हनुमान जी, रूप राम बन जात, कहूँ क्या सेवक की. . .
बन कर भरत राम बन जाकर, आये पादुका साथ,
नहीं श्रेष्ठ है इन सम कोई, एक वानर एक भ्रात, कहूँ क्या सेवक की. . .
धर्म कठिन है सेवक का बस, तजै तात औ मात,
सत्य रूप देखत है सबमें, सबमें सत्य समात, कहूँ क्या सेवक की. . .
स्वामी को बश में करता है, यह विचार ले साथ,
तू ही देता, तू ही लेता, नहिं गाँठ कुछ जात, कहूँ क्या सेवक की. . .
सेवा भाव बड़ा है इतना, होत न भूख खपात,
माँग माँग भिक्षा सेवा की, सद्गुरु पद है प्राप्त, कहूँ क्या सेवक की. . .
सेवक धर्म होत खंडित तब करत जीव उर घात,
सह कर घात हरै दुःख औरन, कर संतन को साथ, कहूँ क्या सेवक की. . .

हैं कहते सत्य, किसको, ये भला कोई न जाना है,
जो देखे झाँक कर दिल में, सभी ने एक माना है।
न सोचो गुजरी बातों को, न सोचो बात आगे की,
तेरी नजरों में जो आवे, उसी को सत्य माना है।
जो चेतन है बसा उर में, वही है सत्य अविनाशी,
न होता नाश है जिसका, अमर उसको ही माना है।
है केवल नाम ईश्वर का, जिसे सब सत्य कहते हैं,
है मरने पर सभी कहते, तभी तो सत्य माना है।
नहीं वो जन्म लेता है, नहीं वो खाक में मिलता,
बना रहता है जो हरदम, वही सत्रूप माना है।
हैं देते सत्य को ही रूप, सब धर्मों के धर्मों का,
चले हैं जो इसे लेकर, जगत ने पूज्य माना है।
जगत है झूठ, जिससे झूठ को ही सत्य कहते हैं,
छिपाये छिप नहीं सकता, तभी जग व्याप्त माना है।
जो सत् के रूप को, बस सत्-गुरु के रूप में देखो,
कहै "पागल" वही सत्गरु है, जिसको ब्रह्म माना है।

मन तूँ कर ले माँ का ध्यान,
उर में ज्योति जगेगी तेरे, होगा गुरु का ज्ञान
मन तूँ कर ले माँ का ध्यान,
वही उमा है वही राधिका, वही है शक्ति महान,
वक रूपी तेरा स्वरूप है, कोटि काम छवि धाम,
मन तूँ कर ले माँ का ध्यान,
प्रेम रूप तेरी है मूरत, मधुर-मधुर मुस्कान,
नयन नेह बरसत हैं ऐसे, सुधा पियें जस प्राण।
मन तूँ कर ले माँ का ध्यान,
तेरा ध्यान करत हैं शंकर, करें श्याम भगवान,
श्याम श्याम कहते कहते ही भई तुम श्याम समान।
मन तूँ कर ले माँ का ध्यान,
"पागल" को वर ऐसा दे दो, उपजे प्रेम उफान,
बहे अश्रु धारा गंगा सी, हो गुरु अन्तर्ध्यान।
मन तूँ कर ले माँ का ध्यान।

जप जप जप जप जप जप जप जप जप जप जप जप जप ले,
तू प्रभु नाम को जप ले, तू गुरु नाम को जप ले।
भव बंधन सब छूट जायेंगे, हरी नाम को जप ले। जप जप . . .
काम क्रोध मद मोह हटे सब, गुरु अर्पण मन कर ले, जप जप . . .
प्रेम भाव के दीप जलाकर, समदर्शी तूँ भज ले, जप जप . . .
जीवन बीता जात है तेरा, क्षणिक देर नहिं कर ले। जप जप . . .
राम मिलन की होय लालसा, राम नाम तू जप ले। जप जप . . .
कृष्ण मिलन की उठत चाहना, कृष्ण नाम तू जप ले। जप जप . . .
ब्रह्म मिलन की होय चाहना, ओम नाम तू जप ले। जप जप . . .
मातु-दरश की होय कामना, मंत्र गायत्री जप ले। जप ले जप ले जप ले. .
है सब रूप भवानी शंकर, गुरु रूप में जप ले। जप ले जप ले जप ले . .

प्रकाशं नमामी प्रकाशं नमामी, प्रकाशं नमामी प्रकाशं नमामी,
नमामी नमामी नमामी नमामी, नमामी नमामी नमामी नमामी,
हे सत्यं प्रकाशं नमामी नमामी
हे चेतन प्रकाशं नमामी नमामी
हे गुरु रज प्रकाशं नमामी नमामी
हे गुरु नख प्रकाशं नमामी नमामी
हे गुरु पद प्रकाशं नमामी नमामी
हे सत्गुरु प्रकाशं नमामी नमामी
हे भानु प्रकाशं नमामी नमामी
हे अग्नि प्रकाशं नमामी नमामी
हे वाणी प्रकाशं नमामी नमामी
हे निज उर प्रकाशं नमामी नमामी
हे दिव्यं प्रकाशं नमामी नमामी
विभुं व्यापकं ब्रह्म ज्योति नमामी
प्रकाशं नमामी प्रकाशं नमामी
नमामी नमामी नमामी नमामी।

हे गायत्री रूपं गणेशं स्वरूपं, सदाचार रूपं सदाचार रूपं।
हे ज्योति स्वरूपं, गुरु शंकरा पद सदाचार रूपं, सदाचार रूपं।।
हे शून्य स्वरूपं हे पूर्णादि रूपं, सदाचार रूपं, सदाचार रूपं।
हे भानु प्रकाशं, प्रकाशं प्रकाशं, सदाचार रूपं, सदाचार रूपं।।
हे अग्नि प्रकाशं हे नूरे प्रकाशं, सदाचार रूपं, सदाचार रूपं।
हे प्रेमः स्वरूपं हे ब्रह्म स्वरूपं, सदाचार रूपं, सदाचार रूपं।।
हे सत्यं स्वरूपं, चेतन स्वरूपं, आनन्द रूपं, स्वरूपं स्वरूपं।
हे सत्गुरु स्वरूपं हे सत्गुरु स्वरूपं, हे सत्गुरु स्वरूपं हे सत्गुरु स्वरूपं।
सदाचार रूपं, सदाचार रूपं, सदाचार रूपं, सदाचार रूपं।।
हे ब्रह्म स्वरूपं, हे देवस्य रूपं नमामि नमामि नमामि नमामि।

सदाचार के थे पुजारी तुम्हीं तो, सदाचार करता था पूजा तुम्हारी।
महामंत्र है यह पढ़ाया तुम्हीं ने, महामंत्र करता था पूजा तुम्हारी।।
इसी मंत्र से तुमने पूजा कराई, इसी मंत्र से तुमने विद्या सिखाई।
इसी मंत्र को राम ने था पढ़ाया, इसी मंत्र को कृष्ण ने था बताया।।
यही मंत्र है विश्व का बस सहारा, निकलती थी वाणी यह हरदम तुम्हारी।
सदाचार के थे पुजारी तुम्हीं तो, सदाचार करता था पूजा तुम्हारी।।

गुरुदेव तेरे चरणों की रज धूल जो मिल जाये।
सच कहता हूँ गुरुदेव, तकदीर बदल जाये।।
यह मन बड़ा चंचल है, कैसे मैं भजन करूँ।
जितना मैं इसे समझाऊँ उतना ही मचलता है।।
सुनते हैं तेरी रहमत, दिन-रात बरसती है।
इक बूँद जो मिल जाये, दिल की कली खिल जाये।
नजरों से गिराना ना, चाहे जो भी सजा देना।
नजरों से जो गिर जाये, मुश्किल है संभल पाना।
गुरुदेव इस जीवन की बस एक तमन्ना है
तुम सामने हो मेरे और दम ही निकल जाये।।

ऊँ आनन्द, ऊँ आनन्द, आनन्द ऊँ आनन्दं।
सच्चिदानंद, परमानंद, प्रेमानन्द ऊँ आनन्द।
सद्गुरु चरणं पूर्णानन्द, ऊँ आनन्द ऊँ आनन्द।
सत्य स्वरूपं, चेतन रूपं, ऊँ आनन्द ऊँ आनन्द।
ऊँ आनन्द, ऊँ आनन्द, ऊँ आनन्द, ऊँ आनन्द, ऊँ आनन्द।
ऊँ आनन्द, ऊँ आनन्द, ऊँ आनन्द, ऊँ आनन्द, ऊँ आनन्द।
ऊँ आनन्द, ऊँ आनन्द, ऊँ आनन्द, ऊँ,आनन्द, ऊँ आनन्द।

जीवन का मैंने सौंप दिया, सब भार तुम्हारे हाँथों में।
उद्धार पतन सब मेरा है, सरकार तुम्हारे हाथों में,
हम तुमको कभी नहीं भजते, फिर भी तुम हमें नहीं तजते,
अपकार हमारे हाथों में, उपकार तुम्हारे हाथों में,
हम में तुम में कुछ भेद नहीं, हम नर हैं तुम नारायण हो
हम हैं संसार के हाथों में, संसार तुम्हारे हाथों में
कल्पना बनाया करती है, एक सेतु विरह के सागर पर,
जिससे हम पहुँचा करते हैं, उस पार तुम्हारे हाथों में,
दृग विन्दु कह रहे हैं हे भगवन, दृग नाव भंवर सागर में है,
मझधार तुम्हारे हाथों में, पतवार तुम्हारे हाथों में।।

तू राम भजन कर प्राणी, तेरी दो दिन की जिन्दगानी।
काया माया बादल छाया, मूरख मन काहे भरमाया,
उड़ जायेगा सांस का पंछी, फिर का आनी जानी।।
तू राम भजन कर प्राणी,
सजन सनेही सुख के संगी, दुनिया की है चाल दुरंगी।
नाच रहा है काल शीश पर, चेत चेत अभिमानी।।
तू राम भजन कर प्राणी,
जिनने राम नाम गुण गाया, उनके लगी न दुख की छाया।
निर्धन के धन राम नाम हैं, मैं हूँ राम दीवानी।।
तू राम भजन कर प्राणी,

सदाचार आश्रम एवं मातेश्वरी भवन

राजेन्द्र नगर, लखनऊ

मुख्य प्रवेश द्वार एवं चच्चा जी की मूर्ति

आर. एस. प्रिंटिंग प्रेस, उरई